Bsc(Ag) - I year, I Semester

Agronomy - 5111

Prepared by - "Pankaj jaiswal"

Co-operated by :-

1) Manish bareth
2) Durgesh Sahu
3) Aman Verma
4) Prakash Verma
5) Niraj Sonkar
& Swamil Agrahari.

Scanned by CamScanner

Date
Page

Agronomy meanings :-

Agronomy शब्द ग्रीक भाषा के Agros एवं Nomos शब्दो से मिलकर बना है। जिनका शाब्दिक अर्थ क्रमशः भूमि एवं प्रबंध से है, अर्थात् Agronomy का शाब्दिक अर्थ भूमि प्रबंधन से है।

Defination :-

"सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान की वह शाखा है, "जिसमें फसल उत्पादन एवं भूमि प्रबंधन के सिद्धांतो एवं व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है।"

सस्य विज्ञान के क्षेत्र (Scope of Agronomy) :-

सस्य विज्ञान का फसलोत्पादन से प्रत्यक्ष संबंध है। मौजूदा समय में हमारे देश की जनसंख्या एक अरब के ऊपर पहुंच चुकी है, इसलिये सघन खेती अथवा उत्पादकता बढ़ाकर आगामी दिनों के लिये आवश्यक खाद्यान्न समस्या का समाधान किया जा सकता है। सस्य विज्ञान का क्षेत्र बिन्दुवार इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है-

(i) खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में :- अन्न, दालें एवं तेल हमारे ~~देश में उगाये जाने वाले प्रमुख ऐसे की फसले~~ भोजन के प्रमुख घटक हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या एवं उसकी भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति, हम सघन खेती के माध्यम से कर सकते हैं। इस समय हम उत्पादन में आत्मनिर्भरता हासिल कर लिये हैं। दाल एवं तेल को अभी भी आयात करने की आवश्यकता पड़ती है, अतः दलहनी एवं तिलहनी फसलों के उत्पादन की ओर हमें विशेष जोर देने की आवश्यकता है।

Scanned by CamScanner

② रेशा उत्पादन के क्षेत्र में :- कपास, जूट एवं सनई हमारे देश में उगाये जाने वाले प्रमुख फसल हैं। इन फसलों का उत्पादन कर के हम वस्त्र एवं अन्य औद्योगिक उत्पादो हेतु कच्चा माल उपलब्ध करा सकते है, और विदेशी मुद्रा भी अर्जित कर सकते है।

③ पशु चारा उत्पादन के क्षेत्र में :- विश्व के भौगोलिक क्षेत्रफल में से भारतवर्ष के पास केवल 2% क्षेत्रफल है। परन्तु विश्व में पशुधन में 15% पशुधन केवल भारतवर्ष में पाये जाते हैं। यहाँ पर चारा उत्पादन करा पाना बड़ा समस्या हो जाती है। जो 4% भूमि में चारा उत्पादन किया जाता है। परन्तु बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण चारा उत्पादन का भूमि कम होती जा रही है। और यहाँ का कृषि पशु पर ही आधारित है, जिससे पशुओं को पोषक - तत्व के लिये चारा उत्पादन करना आवश्यक है, इससे कृषि में भी गति आयेगी और पशुपालन में भी उत्पादन मिलेगा।

④ उद्योगो के लिये कच्चे माल की पूर्ति के क्षेत्र में :- हमारे देश की अर्थव्यस्था कृषि - आधारित है। देश में कृषि उत्पादन आधारित विभिन्न उद्योगों जैसे - चीनी, तेल, कपड़ा एवं रेशा उद्योग इत्यादि सस्य उत्पादन आधारित है, और उद्योग में कच्चे माल की पूर्ति होती है।

⑤ राष्ट्रीय आय के क्षेत्र में :- सस्य उत्पादन के अंतर्गत विभिन्न व्यवसायिक फसलों जैसे चाय, कॉफी, रबर, तम्बाकू, मसाले, कपास एवं जूट इत्यादि का उत्पादन किया जाता है। इसे विदेशों में निर्यात करने से विदेशी मुद्रा की प्राप्ती होती है।

Scanned by CamScanner

Date
Page

⑥ टिकाउ खेती के क्षेत्र में :- बढ़ती हुई जनसंख्या वृद्धि के लिये खाद्यान्न कि पूर्ति करा पाना सस्य वैज्ञानिकों एवं अन्य कृषि वैज्ञानिकों के समक्ष एक कड़ी चुनौती है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति भी बनी रहे और पर्यावरण संतुलन भी बनी रहे, जिसके लिये फसल चक्र अपनाकर और जैविक खाद का प्रयोग करना होगा। कीटनाशी, कवकनाशी, व शाकनाशी दवाओं का प्रयोग नहीं करनी होगी। आगे आनेवाली पीढ़ी के लिये टिकाऊ कृषि करनी होगी।

⑦ परिवार की खुशहाली में :- अच्छे विधि से उपने से अच्छी उत्पादन होगी जिससे लोगो की आय बढ़ेगी। तथा परिवार भी खुश रहेगा। खेती ही देश की उन्नति का आधार है।

⑧ रोजगार के क्षेत्र में :-

Scanned by CamScanner

Date
Page

* Seed and sowing :-

Seed (बीज) :- लैंगिक अथवा वानस्पतिक रूप से प्रवर्धित रोपण सामग्री, जो बुवाई और रोपण के लिए उपयोग की जाती है एवं जिसमें कीट-व्याधियों का कोई भी संक्रमण नहीं होता तथा जिसे सही बोने पर अच्छी पौध संख्या प्राप्त होती है, बीज कहलाता है।

अंकुरण (Germination) :- एक बीज भ्रूण से जो अनुकुल परिस्थितियों में एक सामान्य पौधा देने में सक्षम हो तथा एक नन्हें पौधों का बाहर निकलना एवं विकसित होना अंकुरण कहलाता है।

बीज का महत्व (Importance of seed)

(i) बीज अपनी जाति के रक्षक एवं संवर्धक हैं।
(ii) यदि बीज शुद्ध नहीं है एवं उसमें अन्य फसल मिश्रित है तो उत्पादन का मूल्य कम मिलेगा।
(iii) बीज ही एक ऐसा कारक है जो अच्छे उत्पादन के लिए किसान का सबसे अधिक ध्यान चाहता है।

अच्छे बीजो के गुण :- एक अच्छे और गुणता वाले बीज में निम्न गुण होना चाहिये-

(i) बीज की भौतिक शुद्धता :- बीज दूसरे फसलो की बीजों अथवा खरपतवारों के बीजो से मुक्त होना चाहिये। एक अच्छी गुणता वाले बीज में कंकड़, पत्थर, फसल अवशेष, मिट्टी या धूल शामिल नहीं होना चाहिये।

Scanned by CamScanner

(ii) बीज की आनुवांशिक एवं जातीय शुद्धता :- बीज बिल्कुल अपनी जाति के अनुरूप होना चाहिये यदि एक ही फसल के दो किस्मों के बीज आपस में मिले हुए हैं तो बुवाई का समय, पकने का समय, उनके खाद उर्वरक एवं पानी की आवश्यकता, व्याधियों के प्रति-प्रतिरोधकता सब अलग-अलग हो जाती है, और उत्पादन में कमी आती है।

(iii) बीज के रंग, रूप, आकार में समानता :- बीजों के रंग, रूप, आकार में समानता होनी चाहिये क्योंकि जो पौधे छोटे बीजों से निकलते हैं वे कमजोर एवं उनका विकास अच्छे से नहीं हो पाता है।

(iv) बीज में नमी की उपयुक्त मात्रा :- बीजों में उपस्थित नमी की मात्रा एवं अंकुरण का सीधा संबंध है। यदि बीज ज्यादा सूखे हैं तो बीज का भ्रूण मर भी सकता है। इसके अतिरिक्त यदि बीज में नमी की मात्रा अधिक है तो उसमें विभिन्न प्रकार के कवक का भी संक्रमण भी हो सकता है एवं इस प्रकार की बीज अंकुरण क्षमता समाप्त हो सकती है।

(v) बीज परिपक्व हो :- बीज की अच्छी गुणवत्ता पाने के लिये फसल के दाने कड़े होने के बाद काटना चाहिये। यदि बिना परिपक्व हुये बीजों को बोया जायेगा तो पौधे कमजोर होंगे एवं विभिन्न जैविय एवं अजैविय प्रभावों के आक्रमण के प्रति ज्यादा ग्राह्यशील होंगे।

vi) बीज में अच्छी अंकुरण क्षमता हो
vii) बीज रोग रहित हो।
viii) बीज सुसुप्त न हो।

Scanned by CamScanner

Date
Page

बीजों के प्रकार :- बीजो के स्वभाव एवं उनके उत्पादन में अपनायी जाने वाली सावधानियों के आधार पर बीजों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया गया है -

(i) नाभिकीय बीज (Nucleus seed) :- पादप प्रजनक द्वारा जब मूल बीज पहली बार विकसित किया जाता है, जिसमें शत् प्रतिशत आनुवांशिक व भौतिक शुद्धता होती है तथा प्रजनक इसे पैतृक संग्रह बीज के रूप में बीज प्रगुणक के लिये प्रयोग करता है, उसे नाभिकीय बीज कहते हैं।

(ii) प्रजनक बीज (Breeder's seed) :- जो बीज नाभिकीय बीज से प्रजनक की देख-रेख में पैदा किये जाते हैं, उन्हे प्रजनक बीज कहते हैं। ये बीज उच्च आनुवांशिक मान वाले होते हैं जिनकी मात्रा कम होती है एवं बहुधा महंगे भी होते हैं। इन बीजों की आनुवांशिक शुद्धता, उपज क्षमता, कीट-व्याधियों के प्रति स्वभाव एवं अनुकुलता आदि के लिये बीजो को देश के विभिन्न भू-जलवायु क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रों के विभिन्न स्तर के परीक्षण प्रयोगों हेतु भेजा जाता है।

(iii) प्रमाणित बीज (Certified seed) :- ये बीज आधार बीज से प्रमाणीकरण संस्था की देख-रेख में पैदा किये जाते हैं, जिन्हे किसानों को व्यवसायिक फसल उत्पादन

Scanned by CamScanner

(iii) आधार बीज (foundation seed) :- प्रजनक बीज से उत्पादित बीज को आधार बीज कहते है। इस बीज में विशेष मानको के अनुसार आनुवंशिक गुण और शुद्धता सदैव बनी रहती है। ये बीज सदैव किसी संस्था विशेष जैसे- राष्ट्रीय बीज परियोजना, राज्य बीज निगम या राज्य में कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा उत्पादित किये जाते हैं।

(iv) प्रमाणित बीज (certified seed) :- ये बीज आधार बीज से प्रमाणीकरण संस्था की देख-देख में पैदा किये जाते है, जिन्हे किसानों को व्यवसायिक फसल उत्पादन के लिये वितरित किया जाता है। ये बीज राष्ट्रीय बीज निगम (NSC) या राज्य के कृषि विश्वविद्यालय या उत्पादक योजना के अंतर्गत किसानों के द्वारा पैदा किये जाते है।

Scanned by CamScanner

Date
Page

Method of seed sowing :-
बीज @ बुवाई की विधियाँ :-

① छिड़काव विधि (Broad casting method)
② कतार बुवाई विधि (Line sowing method)

① छिड़काव विधि (Broad casting method) :- बीजो की बुवाई करने की यह एक अवैज्ञानिक विधि है। यह विधि सरल एवं पुरानी है। इस विधि में सामान्यतः ऐसे फसलों के बीज बोये जाते है, जो आकार में छोटे होते है, जैसे - बर्सीम, लूसर्न, धान, बाजरा, सरसों, राम तिल, लघुधान्य आदि। इस विधि में बीजो को बोने के लिये सबसे पहले खेत की तैयारी की जाती है। इसके बाद बीजो को हाथो से छिड़कर बो दिया जाता है। बोने के बाद, बीजों को या तो पाटा चलाकर भूमि में मिला दिया जाता है अथवा हल्के कृषि यंत्र जैसे - बखर इत्यादि से मिला दिया जाता है। इस विधि की लाभ एवं हानियाँ इस प्रकार है -

लाभ :- ① यह आसान एवं सस्ती विधि है।
② बुवाई के लिये किसी भी यंत्र की आवश्यकता नहीं होती है।
③ इस विधि में कम समय में अधिक बुवाई की जा सकती है।

हानि :- ① बीज की मात्रा, गहराई एवं बुवाई अन्तरण पर कोई नियंत्रण नहीं रहता है।
② जो बीज ज्यादा गहराई पर चले जाते है, वे सड़ जाते है, जबकि कुछ बीज सतह पर ही रह जाते है, वे अंकुरित नहीं हो पाते है।

Scanned by CamScanner

③ इनमें अधिक बीज की आवश्यकता होती है।
④ फसल की सिंचाई में अधिक समय लगता है।
⑤ निंदाई-गुड़ाई में बाधा उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त निंदाई-गुड़ाई के यंत्रो का उपयोग भी संभव नहीं होता है।

② कतार बुवाई विधि (Line sowing method) :- इस विधि में बीजों की बुवाई कतारो में की जाती है। खेत की तैयारी के बाद विभिन्न यंत्रो की मदद से या हाथो से बुवाई या रोपण, कतारो में की जाती है। यह एक वैज्ञानिक एवं आधुनिक विधि है। इस विधि के लाभ एवं हानियाँ निम्नलिखित हैं:-

लाभ :- (i) इस विधि में हम बीज बुवाई की मात्रा पर नियंत्रण रख सकते हैं।
(ii) बीजों की बुवाई इच्छित गहराई एवं दूरी पर कर सकते हैं।
(iii) छिड़काव विधि की तुलना में बीज कम लगते हैं।
(iv) फसल की निंदाई-गुड़ाई आसानी से की जा सकती है।
(v) इस विधि में अधिक सिंचाई दक्षता मिलती है, साथही सिंचाई में कम समय लगता है।
(vi) फसल कटाई में भी आसानी होती है।

हानि :- (i) यह बुवाई की एक महंगी विधि है।
(ii) बुवाई में अधिक समय लगता है।
(iii) बुवाई के लिये यंत्रो की आवश्यकता होती है।

यह तीन प्रकार का होता है -
(i) समतल बुवाई विधि (ii) रोपण विधि (Trans planting method)
(iii) मेड़ विधि

Scanned by CamScanner

(i) समतल बुवाई विधि :- समतल तैयार खेतों में बुवाई की निम्न विधि याँ हैं-

(अ) देशी हल के पीछे बुवाई :- इस विधि में समतल तैयार खेत में देशी हल के माध्यम से बनाये गये कूंडो में बुवाई की जाती है। एक आदमी देशी हल से कूंड बनाता जाता है, जबकि पीछे से दूसरा आदमी खुले हुए कुंडो में बीजो की बुवाई करता जाता है। बीजो के बोने के बाद पाटा चलाकर बीजो को ढक दिया जाता है।

(ब) डिबलिंग विधि :- इस विधि में डिबलर यंत्र के माध्यम से बुवाई की जाती है। यह एक साधारण यंत्र होता है, जिसका आकार आयताकार होता है। यह एक लोहे या लकड़ी के फ्रेम का बना होता है। इस फ्रेम में खूंटियाँ लगी रहती है। इन खुटियों की आपस की दूरी कम या अधिक करने के लिये वैकल्पिक छेद या अन्य व्यवस्था रहती है। यंत्र के बीचो-बीच एक हत्था भी लगा होता है। तैयार खेत में इस यंत्र को हटाकर रखते जाते है। खूटियों के कारण तैयार खेत में बने छेदो में बीजो की बुवाई की जाती है। बोये हुये बीजो को मिट्टी से ढक देते हैं।

(स) ड्रिलिंग विधि :- इस विधि में बीजो की बुवाई बैल-चलित या ट्रेक्टर चलित सीड ड्रिल या सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल के माध्यम से की जाती है। इस विधि में बीज एवं उर्वरक एक ही कतार में डाले जाते हैं।

(द) क्रिस-क्रास विधि :- इस विधि को आर-पार विधि भी कहते है। इस विधि में बीजों को दो दिशाओं में समकोणों पर बुवाई करते हैं।

(ii) रोपण विधि (Transplanting) (iii) मेड़ विधि

Scanned by CamScanner

* Tillage and tilth :-

* **Tillage :- (परिभाषा) :-** भू-परिष्करण, भूमि का यांत्रिक परिवर्तन है, जो फसलों की बढ़वार के लिये आवश्यक उचित भू-परिस्थिति प्रदाय करता है। भू-~~परिस्थिति~~ परिष्करण में वे सभी क्रियाएं सम्मिलित हैं जो भूमि के भौतिक गुणों को परिवर्तित करने के लिये उपयोग में लायी जाती है।

भू-परिष्करण का वर्गीकरण (Classification of tillage)

(I) **प्राथमिक भू-परिष्करण :-** भू-परिष्करण की वे क्रियाएं, जो भूमि काटती है, भूमि की ऊपरी परत को तोड़ती है, एवं मिट्टी को पलटकर कूड़ा-करकट को भूमि में दबा देती है, प्राथमिक भू-परिष्करण कहलाती है। ये क्रियायें भूमि में ~~प्रत्येक~~ प्राथमिक रूप से ज्यादा गहराई में की जाती है जो भूमि की ऊपरी परत को खुरदुरी बना देती है। प्राथमिक भू-परिष्करण में प्रयुक्त होने वाले प्रमुख यंत्र इस प्रकार है - मिट्टी पलटने वाले हल, तवेदार हल, चीजल हल, हैवी डिस्क, हैरो एवं रोटावेटर आदि।

इसके निम्न उद्देश्य है :-

(i) अच्छे अंकुरण एवं पौध निर्माण को प्रोत्साहित करने हेतु संतोषप्रद स्तर की बीज शैय्या तैयार करना।
(ii) खरपतवार नियंत्रण के लिये।
(iii) भूमि की जलधारण क्षमता बढ़ाने के लिये।
(iv) मृदा क्षरण को नियंत्रित करने के लिये।
(v) कीट-व्याधियों के नियंत्रण के लिये।
(vi) खेत में डाले गये खाद एवं उर्वरको को भूमि में मिलाने के लिये।

Scanned by CamScanner

(2) द्वितीयक भू-परिष्करण (Secondary tillage) :-

प्राथमिक भू-परिष्करण के बाद की जाने वाली भू-परिष्करण की वे क्रियायें जो भूमि को भुरभुरी बनाने के लिये, समतल करने के लिये एवं दृढ़ता प्रदान करने के लिये की जाती है, द्वितीयक भू-परिष्करण कहलाता है। ये क्रियायें भूमि में खाली वायु स्थानों को भरने, खरपतवारो को नष्ट करने एवं नमी संरक्षण करने में सहायक होती है। द्वितीयक भू-परिष्करण के यंत्र कम गहराई पर कार्य करते है जो इस प्रकार हैं- हेरो, हैरो एवं कल्टीवेटर आदि जो कभी-कभी इस उद्देश्य के लिये प्रयोग किये जाते हैं।

उद्देश्य :- (i) खरपतवार नियंत्रण के लिये।
(ii) भूमि को भुर-भुरी बनाने के लिये।
(iii) भूमि को समतल करने के लिये।
(iv) मिट्टी को दृढ़ता प्रदान करने के लिये।
(v) खेत के ढेला को तोड़ने के लिये।
(vi) गन्ना, आलू, मूंगफली, कंदीय फसलों आदि में मिट्टी चढ़ाने के लिये।

अधिक भू-परिष्करण से हानियाँ :-

(i) मृदा संरचना पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
(ii) अधिक वायु संचार के कारण, जीवाश्म पदार्थ की भूमि में कमी हो जाती है।
(iii) मृदा का कटाव अधिक हो जाता है।
(iv) खेत की तैयारी में अधिक समय तक धन लगता है।

Scanned by CamScanner

* न्यूनतम भू-परिष्करण से लाभ :-

(i) भूमि का कटाव कम होता है।
(ii) मृदा की संरचना ठीक रहती है।
(iii) भूमि में जीवांश पदार्थ पर्याप्त मात्रा में बने रहते हैं।
(iv) समय व श्रम की बचत होती है।
(v) उपज भी अच्छी होती है।

* भू-परिष्करण की आधुनिक धारणा :-

~~संरक्षण भू-परिष्करण (Conservation tillage) :-~~

पारम्परिक रूप से यह सोचा जाता था कि, बार-बार जमीन की अच्छी जुताई कर खेत की गहन तैयारी करना चाहिये। जबकि, आधुनिक अवधारणा के अनुसार भूमि की न्यूनतम जुताई करना चाहिये। भूमि की तैयारी में होने वाले व्यर्थ समय को बचाने के लिये न्यूनतम एवं शून्य भू-परिष्करण की वकालत आधुनिक अवधारणा के तहत की जाती है, जिन्हे संयुक्त रूप से "संरक्षण भू-परिष्करण" (Conservation tillage) की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार के भू-परिष्करण का उद्देश्य, पारम्परिक भू-परिष्करण की अपेक्षा भूमि एवं जलस्रस में कमी लाना है।

सामान्यतः इस प्रकार के भू-परिष्करण, पश्चिमी देशो में अपनाये जाते हैं, जहाँ फसल की कटाई के बाद काफी मात्रा में भूमि की सतह पर फसल के अवशेष छोड़ दिये जाते हैं। ये फसल अवशेष, वर्षा के बुँदो की मार से भूमि की रक्षा करते हैं। ऐसी परिस्थितियों में फसल अवशेषो को कम से कम छेड़-छाड़ कर बुवाई की क्रियाएँ की जाती है।

Scanned by CamScanner

टिल्थ (Tilth)

भू-परिष्करण से निर्मित भूमि की भौतिक दशा जो पौधों की बढ़वार के लिये उपयुक्त होती है, उसे "टिल्थ" कहते हैं। भूमि की भौतिक दशा से आशय उसकी संरचनात्मक परिवर्तनों से है जो अच्छा बीज अंकुरण एवं फसल बढ़वार को प्रोत्साहित करती है। भू-परिष्करण की क्रियाओं का उद्देश्य अच्छा 'टिल्थ' उत्पादित करना एवं उसे बनाये रखना है।

अच्छे टिल्थ के गुण :- भू-परिष्करण से निर्मित भूमि की अच्छी भौतिक दशा टिल्थ में निम्न गुण होने चाहिये:-

(i) भूमि को कोमल होना चाहिये।
(ii) भूमि भूरभुरी होना चाहिये।
(iii) मृदा समुच्चयों में जल एवं वायु मृदा-क्षरण को सहने की क्षमता होना चाहिये।
(iv) भूमि में वर्षा जल को धारित करने की उच्च शक्ति होनी चाहिये।
(v) भूमि में पानी को सोखने की उचित क्षमता होनी चाहिये।
(vi) मृदा में केशीय एवं अकेशीय रन्ध्र समान होना चाहिये।
(vii) भूमि में क्रम्ब मृदा संरचना होना चाहिये जिनमें मृदा समुच्चयों का आकार 1-5 mm का होना चाहिये।

Scanned by CamScanner

Date
Page

* Plant Geometry (पौध ज्यामिति)

भूमि पर पौधे के वितरण की पद्धति अथवा प्रत्येक पौधे को उपलब्ध क्षेत्र की आकृति को पौध ज्यामिति कहते हैं।

फसल के बीजो / पौधों को कई प्रकार से बोया या लगाया जाता है। बीजों की बुवाई या पौधों की संख्या रोपाई करने से प्रत्येक पौधे को उसके बोने या लगाने की विधि के आधार पर अलग - अलग आकृति का क्षेत्र उपलब्ध होता है। यह क्षेत्र गोलाकार, वर्गाकार, आयताकार या घनाकार हो सकता है। इन सभी आकृतियों में घनाकार बुवाई विधि में सबसे अधिक पौध संख्या आती है।

* Plant Papulation / Crop papulation (पौध संख्या)

प्रति इकाई क्षेत्रफल पौध की संख्या अथवा प्रत्येक पौधे को उपलब्ध क्षेत्रफल को पौध संख्या कहते हैं।
इसे पौधों की प्रति एकड़ या प्रति हेक्टेयर के रूप में व्यक्त करते हैं। सघन बोई जाने वाली फसलों में प्रति इकाई क्षेत्रफल पौधों की संख्या कम होती है। वहीं दूर - दूर बोयी जाने वाली फसलों में पौध संख्या अधिक होती है।

Scanned by CamScanner

Date
Page

Crop Nutrition (पौध पोषक तत्व)

"वे तत्व जिन्हे पौधा जमीन एवं वायु से प्राप्त करता है एवं इसके बिना पौधा अपना जीवन चक्र पूरा नहीं कर पाता है, उन्हे आवश्यक पौध पोषक तत्व कहते हैं।"

पौध पोषक तत्वो की मापदण्ड :-
जैसा कि ऊपर उल्लेखित किया जा चुका है पौध राख के रासायनिक विश्लेषण करने पर 40 तत्व विद्यमान पाये गये हैं, परन्तु उसमें से केवल 16 तत्व ही आवश्यक है। इन पोषक तत्वों की पौधों की अनिवार्यता का क्या आधार या मापदण्ड है, जिससे यह कहा जा सके कि एक विशेष तत्व पौधे के लिये अनिवार्य है जबकि दुसरा तत्व नहीं।
ऑरनान ने पोषक तत्वों की अनिवार्यता के तीन आधार/ मापदण्ड निर्धारित किये है जो निम्नानुसार है -
(i) आवश्यक पोषक तत्व की अनुपस्थिति में पौधे की बढ़वार एवं विकास अवरूद्ध हो जाते हैं एवं पौधा अपना जीवन-चक्र पूरा नहीं कर पाता है।

(ii) एक आवश्यक पोषक तत्व की अल्पता में इसे उसी तत्व विशेष की प्रदायता कर ठीक किया जा सकता है।

(iii) आवश्यक पोषक तत्व की अनुपस्थिति में पौधे की बढ़वार एवं विकास में कमी हो जाती है एवं पौधा अपना जीवन चक्र पुरा नही कर पाता है।

(iii) वह तत्व विशेष, सीधे रूप से पौधो के पोषण एवं उपापचय क्रियाओं में संबंध रखता है।

Scanned by CamScanner

पोषक तत्वों का वर्गीकरण :-

पोषक तत्वों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधारों पर किया गया है-

(1) आवश्यकता के आधार पर :- इस आधार पर निम्न चार वर्गों में बाँटा गया है-

(a) संरचनात्मक तत्व :- इस वर्ग में कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन आते हैं, इनकी पूर्ति पौधे जल एवं वायु द्वारा स्वयं कर लेते हैं। कुछ पौधों का 95% भाग (C=45%, O=45%, H=4-6) इन्ही तत्वों का होता है।

(b) मुख्य पोषक तत्व :- इन तत्वों की पूर्ति बाहरी रूप में की जाती है। ये तत्व निम्न दो प्रकार के होते है -

(i) प्राथमिक मुख्य पोषक तत्व :- इस वर्ग में NPK आते है, इन तत्वों की अधिकतम मात्रा पौधों को उर्वरकों द्वारा दी जाती है, इसलिये इन्हे उर्वरक तत्व भी कहते हैं।

(ii) द्वितीयक मुख्य पोषक तत्व :- इस वर्ग मे Ca, Mg, S आते हैं। इनकी आवश्यकता प्राथमिक तत्वों से कम होती है।

(c) सुक्ष्म पोषक तत्व :- इनकी आवश्यकता बहुत सुक्ष्म मात्रा में [1 PPM) से कम] होती है। आयरन, जिंक।

(d) अनावश्यक परंतु लाभकारी :- वैज्ञानिक M.J. निकोलस ने कुछ तत्वों को आवश्यक नही लेकिन लाभदायक माना है। उन्होंने इन पोषक तत्वों को कार्यात्मक पोषक तत्व कहा है।
Ex:- Na, Al

(ii) पौधो के विभिन्न भागों पर प्रकट होने वाले कमी के लक्षणों के आधार पर :-

(a) कलिका पर लक्षण प्रकट करने वाले - B, Ca (Bca)

(b) नई पत्तियों पर लक्षण प्रकट करने वाले :- S, Cu, Mn, Fe

(c) पुरानी पत्तियों पर लक्षण प्रकट करने वाले :- N, P, K, Mo, Mg

(d) नई तथा पुरानी दोनो —||— :- Zn (जिंक)

* विभिन्न पोषक तत्वों के कार्य एवं कमी के लक्षण :-

(1) नाइट्रोजन (N)

कार्य :- (i) पौधो की वानस्पतिक वृद्धि तथा हरा रंग प्रदान करना
(ii) क्लोरोफिल के निर्माण में
(iii) नाइट्रोजन पौधो में कार्बोहाइड्रेट के उपयोग में वृद्धि करता है।
(iv) साग, सब्जियों एवं हरे चारे की गुणवत्ता में सुधार करता है।

कमी के लक्षण :- (i) पौधो की निचली पत्तियों में पीलापन आ जाता है।
(ii) पौधा बौना रह जाता है।
(iii) धान के फसल में कल्ले कम फूटते हैं।

Scanned by CamScanner

Date______
Page______

* Manures and fertilizers
(खाद एवं उर्वरक)

खाद (Manures) :- " पौधों एवं जानवरो के कार्बनिक अवशेषो के अपघटित रूप को खाद कहते हैं।

खाद पौधो के लिये आवश्यक सभी पोषक तत्वो को कम या अधिक मात्रा में धारण करता है। इस वर्ग में कम्पोस्ट, गोबर की खाद, तिलहनी खलियाँ, हरी खाद, जीव - जन्तुओं के अवशेष, मल - मूत्र से निर्मित खादें सम्मिलित हैं।

वर्गीकरण :- खादों को उनके स्वभाव के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। कुछ खादे पौधे अवशेषो से, कुछ जीव - जन्तुओं के अवशेषो से, पौधे एवं जन्तु दोनो को मिश्रित अवशेषो से बनायी जाती है/ इनमें से कुछ में कम पोषक तत्व तो कुछ में ये सान्द्र रूप में विद्यमान रहते हैं। इन्ही के आधार पर मानते हुये खादो का वर्गीकरण किया गया है-

(1) पौधे जनित खादे :-

(a) स्थूल खादें :- → हरी खाद, पत्तियों की खाद, पौधे अवशेषो की खाद, ~~लकड़ी~~ लकड़ी का बुरादा, समुन्द्री घासो की खाद आदि।

(b) सान्द्रिय खादें :- तिलहनी खलिया, गन्ना रस का मैल, राख, शीरा।

Scanned by CamScanner

(2) जन्तु जनित खादें :- (a) स्थूल खादें :- गोबर की खाद, मानव विष्ठा, गोबर गैस का गारा।

b) सैन्द्रिय खादें :- हड्डी का चूरा, मछली का चूरा, कुक्कुट विष्ठा, रक्त चूर्ण।

(3) मिश्रित खादें :- कम्पोस्ट, शहरी कम्पोस्ट, गन्दे नालों का पानी, गन्दे नालों का गारा, कृत्रिम कम्पोस्ट।

* गोबर खाद (Farm yard manure) :- पालतू पशुओं के मल-मूत्र, साथ में उनके बिछावन एवं पशुओं को खिलाये गये चारा के अवशेष पदार्थों के अपघटित सम्मिश्रण को गोबर की खाद कहते हैं।

* कम्पोस्ट :- पौध अवशेषों, घरों का कचरा, जानवरों एवं मनुष्यों के मल-मूत्रों का सूक्ष्मजीवीय अपघटित रूप कम्पोस्ट कहलाता है। अच्छी तरह से अपघटित कम्पोस्ट भूरे रंग का होता है। इस तरह कम्पोस्ट तैयार करने की विधि को कम्पोस्टिंग या कम्पोस्ट बनाना कहते हैं।

* हरी खाद :- हरी खाद जुताई द्वारा मिट्टी में अपघटित हरे पौधों उतकों मिट्टी की भौतिक संरचना एवं उर्वरता को सुधारने के उद्देश्य से पलटने की क्रिया है।

Note :- Details :- Black note

Scanned by CamScanner

* उर्वरक (Fertilizers) :- "कारखानों में बनाये जाने वाले वे रासायनिक पदार्थ जो पौधों की पूर्ति के लिये आवश्यक है जो शून्य से एक या एक से अधिक तत्वो की पूर्ति करते है, उर्वरक कहलाते है"।

// उर्वरकों का वर्गीकरण :- पोषक तत्वों की उपस्थिति के आधार पर उर्वरकों को तीन वर्गो में बाँटा गया है-

① एकल उर्वरक :- वे सभी उर्वरक जिनमें किसी भी एक पोषक तत्व की पूर्ति होती है, एकल उर्वरक कहलाते है।
जैसे - यूरिया (N-46%)

② जटिल उर्वरक :- ये उर्वरक कम से कम दो पोषक तत्वों की पूर्ति करते है। तथा इन्हे रासायनिक रूप से तैयार किया जाता है। इन्हे दो वर्गो में बाँटा गया है-
(A) द्वितत्व धारी :- ये मुख्य दो तत्वो की पूर्ति करते है.
जैसे - DAP
(B) तीन तत्व धारी :- ये तीन मुख्य पोषक तत्वों की पूर्ति करते है।
जैसे - NFCo (12:32:16)

③ मिश्रित उर्वरक :- इन्हे भौतिक रूप से मिलाकर तैयार किया जाता है। इन्हे दो वर्गो में बाँटा गया है -
(A) अपूर्ण मिश्रित उर्वरक :- इन उर्वरको से नत्रजन, फास्फोरस, पोटेशियम मेंसे किसी भी दो तत्व की पूर्ति होती है।
जैसे - यूरिया के साथ पोटाश।
(B) पूर्ण मिश्रित उर्वरक :- इस प्रकार के उर्वरको से तीनो प्रकार के तत्वो की पूर्ति होती है।
जैसे - नाइट्रोजन, फास्फोरस के साथ पोटाश।

Scanned by CamScanner

→ नाइट्रोजन धारी उर्वरक :-

इन उर्वरको को चार भागों में विभाजित किया गया है-

① नाइट्रेट उर्वरक (NO_3) :- लगभग सभी फसले नाइट्रोजन को नाइट्रेट के रूप में लेती है। ये उर्वरक मृदा पर क्षारीय प्रभाव छोड़ते हैं। ये उर्वरक अधिक घुलनशील होने के कारण पौधो को शीघ्र उपलब्ध होते है। साथ ही इनकी लैचिंग द्वारा सर्वाधिक हानि होती है।

Ex:- सोडियम नाइट्रेट, कैल्सियम नाइट्रेट, पोटैशियम नाइट्रेट

② अमोनियम उर्वरक :-(NH_4^+) :- इन उर्वरकों की निक्षालन द्वारा हानि बहुत कम होती है। इसी कारण धान की फसल में नाइट्रोजन का उपयोग इसी रूप में करते है। इन उर्वरको का मृदा पर अम्लीय प्रभाव होता है।

जैसे - अमोनियम सल्फेट (20.6% N).

③ अमोनियम नाइट्रेट उर्वरक :-($NH_4 + NO_3$) :- इन उर्वरको में नाइट्रोजन उदासीन नाइट्रेट तथा अमोनियम दोनो ही रूपों में पाई जाती है। इस कारक इनका उपयोग सभी प्रकार के भूमि में किया जाता है। यह सबसे आद्रताग्राही उर्वरक है।

जैसे - कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट - 25% N
अमोनियम नाइट्रेट - 33% N

Scanned by CamScanner

④ अमाइड उर्वरक :- जड़ों द्वारा नाइट्रोजन इस रूप में सीधे ग्रहण नहीं की जाती है। जबकि पत्तियों द्वारा नाइट्रोजन एमाइड रूप में ग्रहण किये जाते हैं। यह उदासीन प्रकृति के रूप में होते हैं।

जैसे - यूरिया - 46% N

खाद एवं उर्वरक में अन्तर :-

Scanned by CamScanner

Date______
Page______

* Water Resources (जल स्त्रोत)

वर्षा का पानी एवं बर्फ का गिरना प्रकृति का मुख्य जल स्त्रोत है। ये जल कुछ मात्रा में भूमि में सोख लिया जाता है, तथा शेष मात्रा नदी, नालो, तालाबो एवं झीलो के द्वारा समुन्द्रो में पहुँच जाता है। वास्तव में सिंचाई के लिये पानी की कमी नही है। देश में जितनी वर्षा होती है, उसका आधे से अधिक पानी बहकर नदियों में चला जाता है। देश के समस्त सिंचित क्षेत्रफल का लगभग 40% भाग सिंचाई के लिये नहरो पर निर्भर है, तथा 35% क्षेत्रफल की कच्चे एवं पक्के कुँओं से सिंचाई की जाती है। शेष 25% क्षेत्रफल ट्यूबवेल, झील एवं तालाबो से सिंचाई की जाती है।

सिंचाई के लिए पानी का स्त्रोत

- धरातलीय स्त्रोत
  - नहरें
  - तालाब
  - नदियाँ
  - झरने
  - बांध
  - नाले
- भूमिगत स्त्रोत
  - कुँआ
  - हस्तचलित नल
  - नलकुप
  - पाताल तोड़ कुँआ

Note - thoda details pdf से

Scanned by CamScanner

Date
Page

Soil-water-plant relationship
(मृदा - जल - पौधा में संबंध)

किसी स्थान की सिंचाई व्यवस्था को अधिक उपयोगी बनाने के लिये उस क्षेत्र की मृदा-जल-पौधा संबंध का अध्ययन आवश्यक है। ~~मृदा-जल~~

पौधों का मृदा एवं मृदा जल से संबंध एक सर्वमान्य तथ्य है। यह सम्बन्ध मृदा की भौतिक दशा, जलवायु के अनेक कारको एवं पौधों की किस्म आदि से प्रभावित होता है। मृदा जल का यह संबंध मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रियाओं एवं फसलोत्पादन को परोक्ष रूप में प्रभावित करता है।

मृदा जल एवं पौधो के सही-संबंधो का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिये मृदा जल स्त्रोत, मृदा के जल के रूप, उपलब्ध मृदा-जल, मृदा जल का संसाधन, पौधो द्वारा मृदा जल का अवशोषण, फसलो की जलमांग, सिंचाई कब करे, कितनी मात्रा में सिंचाई का जल प्रयोग करे अथवा सिंचाई कितनी की जाये, सिंचाई की संख्या एवं सिंचाई की विधि का तकनीकी ज्ञान होना आवश्यक है। फसलोत्पादन में वृद्धि एवं सिंचाई से भरपुर लाभ लेने के लिये पौधो की जड़ो द्वारा मृदा से जलापूर्ति होना आवश्यक है।

पौधो के लिये उपयोगी जल का अवशोषण एवं आपूर्ति निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है -

(1) मृदा के भौतिक गुणो पर
(2) पौधो के गुणो पर
(3) मौसम पर।

Scanned by CamScanner

Date
Page

Crop Water requirment :- (फसल की जलमांग)

"एक किलोग्राम शुष्क पदार्थ उत्पन्न करने के लिए पौधा के विभिन्न अंगो द्वारा जितने किलोग्राम पानी वाष्प के रूप में उत्सर्जित किया जाता है, उसे वाष्पोत्सर्जन अनुपात अथवा पौधो की जलमांग कहते हैं।"

जल मांग को निम्नलिखित समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जाता है -

$$WR = E + T + MU + WSU + TL/IL$$

जहाँ = E = वाष्पीकरण
T = वाष्पोत्सर्जन
MU = उपापचयी क्रिया
WSU = विशेष उपयोग
IL = सिंचाई के दौरान जल की हानि

विभिन्न फसलो की जलमांग -

गन्ना - 200 - 250 cm. (कुल अवधि में)
धान - 100 - 150 cm.
गेहूँ - 45 - 65 cm.
सोयाबीन - 70 cm.

Scanned by CamScanner

फसलों की जलमांग को प्रभावित करने वाले कारक :-

फसलों की जलमांग पर निम्न कारक प्रभाव डालते हैं-

① **तापक्रम** :- वायुमण्डल के तापक्रम की अधिकता होने पर पौधो की जल-मांग बढ़ती है, तथा तापक्रम के कम होने पर जलमांग घटती है। इसी कारण गर्मियों में सर्दियों की अपेक्षा जल्दी-जल्दी सिंचाई करने की आवश्यकता होती है।

② **वायुमण्डल की आर्द्रता** :- पौधों की जल मांग पर वायुमण्डल की आर्द्रता का विशेष प्रभाव पड़ता है। वायु में आर्द्रता कम होने से फसल की जलमांग बढ़ जाती है। ठीक इसके विपरित वायु में आर्द्रता अधिक होने से फसल की जलमांग कम हो जाती है।

③ **फसल की किस्म** :- विभिन्न फसलों की जलमांग अलग-अलग होती है। जैसे- धान, आलू, बर्सीम का अधिक एवं दलहनी फसलों का कम।

④ **भूमि की किस्म** :- बलुई भूमि में कणों का आकार बड़ा होने के कारण पानी अधिक समय तक ठहर नहीं पाता है। जिसके कारण बलुई मृदा की जलमांग अधिक होती है। ठीक इसके विपरित Clay soil की जलमांग कम होती है।

⑤ **भूमि की उर्वरता** :- पर्याप्त जीवांश खाद होने पर जलमांग कम।

⑥ **पत्तियों का आकार** :- जिन फसलों की पत्तियाँ बड़े आकार की, हरी एवं घनी होती हैं, उनमें वाष्पोत्सर्जन क्रिया द्वारा पानी की हानि होती है। तथा उनकी जलमांग बढ़ती है।
जैसे- अरबी, केला, भिण्डी।
तथा छोटे पत्तियों वाली फसलें जैसे- चना, मसुर आदि की जलमांग कम होती है।

Scanned by CamScanner

Date ______
Page ______

Water use efficiency
(जल उपयोग ~~क्षमता~~ / दक्षता) (क्षमता या दक्षता दोनों ही सकते हैं)

"सिंचाई के लिये प्रयुक्त कुल जल की मात्रा और पौधों द्वारा उपयोग किये गये जल की मात्रा के प्रतिशत अनुपात को जल उपयोग क्षमता कहते हैं।

$$WUE = \frac{Y}{ET}$$

जहाँ WUE = जल उपयोग क्षमता
Y = आर्थिक उपज कि.ग्रा./है.।
ET = (वाष्पीकरण + वाष्पोत्सर्जन)

जल उपयोग क्षमता को निम्न रूप में आंका जा सकता है-

① Consumptive water use efficiency :-

इसका आकलन करने के लिये हमें ET के अलावा फसलों की उपापचय आवश्यकताओं में व्यय पानी को भी सम्मिलित कर लेते हैं।

② Field Water use efficiency :-

यदि जल उपयोग क्षमता के आंकलन में केवल ET के बजाय प्रति इकाई फसल की जल मांग पर प्राप्त उपज की मात्रा निकाली जाय तो यह प्रक्षेत्र जल उपयोग क्षमता कहलाता है।

Scanned by CamScanner

जल उपयोग दक्षता को प्रभावित करने वाले कारक :-

① जलवायु
② फसल एवं प्रजाति
③ सस्य क्रियायें
④ मृदा की किस्म तथा प्रकार
⑤ वाष्पोत्सर्जन में कमी
⑥ सिंचाई
⑦ खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग
⑧ पौधा घनत्व

जल उपयोग क्षमता को बढ़ाने के उपाय :-

① सिंचाई की नालियाँ कम चौड़ी व गहरी बनानी चाहिये, जिससे कम क्षेत्रफल से पानी का वाष्पीकरण होने पाये एवं नाली से वाष्पीकरण अति को कम किया जा सके।
② नाली को ढलान होना चाहिये जिससे पानी तेजी से खेत में जाये और percolation से कम से कम क्षति हो।
③ सिंचाई नाली के आसपास खरपतवार नहीं होने चाहियें।
④ खेत की मेड़बंदी करनी चाहिये ताकि पानी बहकर बाहर न जाये।
⑤ अगर मृदा बलुई है तो उसमें जीवांश पदार्थ का उपयोग करना चाहिये जिससे मृदा जल की धारण शक्ति को बढ़ाया जा सकता है।
⑥ यदि संभव हो तो नालियों को पक्की बना देनी चाहिये।
⑦ यथा संभव खेत को ही खरपतवार रहित रखना चाहिये।
⑧ सिंचाई की बौछारी या ड्रिप विधि का उपयोग करके जल उपयोग क्षमता बढ़ायी जा सकती है।
⑨

Scanned by CamScanner

Note:- सिंचाई की विधियाँ और सिंचाई निर्धारण की विधियाँ दोनो अलग होती है

Date
Page

Irigation - scheduling criteria and methods :-

सिंचाई :- " भूमि में कृत्रिम रूप से पानी देने को सिंचाई कहते हैं।

→ सिंचाई की विधियाँ :-

① सतह सिंचाई :- यह सिंचाई की सबसे पुरानी एवं प्रचलित विधि है। हमारे देश में 90% सिंचाई कार्य इसी विधि द्वारा किया जाता है। इस विधि में सिंचाई सतह पर किया जाता है। इसके निम्न प्रकार हैं -

(a) बाढ़ या उत्प्लावन विधि :- यह पुरानी व अवैज्ञानिक विधि है। इस विधि में ढाल के द्वारा पानी खेत में पहुँचता है। जिसके लिये भूमि समतल होना आवश्यक नही है। यह जल स्त्रोत बड़ा एवं सस्ती होने पर उपयोग की जाती है।

(b) चेक बेसिन या क्यारी विधि :- इस विधि में सिंचाई के लिये खेत को क्यारियों में बाट दिया जाता है। इसमें पानी को अधिक दिनों तक रोग जा सकता है

(c) सीमांत पट्टी :- खेत की लम्बाई तथा ढाल की दिशा की ओर लम्बी पट्टियाँ विभाजित की जाती है। तथा ढाल 0.5% रखी जाती है।

(d) कुण्ड विधि :- जिन फसलो को मेड़ या प्ररोह में लगाया जाता है। जैसे- गन्ना, आलू, मक्का आदि। उन्हे कुण्ड विधि के द्वारा पानी दिया जाता है।

Scanned by CamScanner

② अधोसतही विधि :- इस विधि का उपयोग वहाँ किया जाता है, जहाँ अधोसतह कठोर होती है। यह ऐसी भूमि के लिये उपयोगी है, जहाँ जलधारण क्षमता कम तथा अंत: स्पंदन ज्यादा होगी। भारत में यह ज्यादा प्रचलित नहीं है, फिर भी गुजरात व केरल में सुपारी व नारियल के लिये किया जाता है। यह एक महँगी विधि है।

③ बौछारी या स्प्रिंकलर विधि :- यह शक्ति चलित विधि है, जिसमें पानी दबाव से स्प्रे के रूप में दिया जाता है। असमतल और बलुई में स्प्रिंकलर सर्वाधिक उपयुक्त होता है। यह सबसे अधिक हरियाणा में प्रचलित है। यह हर्बिगेशन के लिये भी उपयुक्त है।

④ टपक या ड्रिप विधि :- यह सबसे आधुनिक विधि है। इसका विकास इजराइल से हुआ है। यह जल अभाव और लवण प्रभावित स्थानों के लिये उपयुक्त होता है। इस विधि में पानी जड़ क्षेत्र तक बुंदो के रूप में पहुँचता है। इसकी जल उपयोग क्षमता 70-90% तक अर्थात् सबसे अधिक होती है। इसमें बाढ़ विधि की तुलना में 2-2.5 गुना अधिक क्षेत्र सिंचित किया जा सकता है। इस विधि के द्वारा खरपतवार का भी नियंत्रण किया जा सकता है।

Scanned by CamScanner

* सिंचाई के निर्धारण के सिद्धांत :-

पौधे के सम्पूर्ण जीवन काल में दैहिक तथा उपापचय की क्रियाओं के सुचारु रूप से सम्पन्न कराने के लिये पानी की आवश्यकता होती है अतः पानी के अभाव में यह क्रियाये सुचारु रूप से नहीं हो पाती जिससे पौधे की वृद्धि एवं विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पौधों में होने वाली इन क्रियाओं के कारण मृदा से नमी का अवशोषण होता रहता है, जिससे मृदा में पानी की मात्रा निरंतर घटती जाती है। सिंचाई के निर्धारण करते समय मुख्यतः दो बाते जैसे:(1) सिंचाई कब की जाये (2) कितनी की जाये ध्यान में रखनी आवश्यक है। फसल में सिंचाई की निश्चित अवस्था आने पर ही सिंचाई करनी चाहिये अन्यथा लाभ के बजाय हानि अधिक होगी। सिंचाई की कम या अधिक मात्रा करने पर भी फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

सिंचाई के निर्धारण की विधियाँ :-

① जलवायु संबंधी आँकड़ो के आधार पर :- जलवायु संबंधी आँकड़ो के आधार पर सिंचाई का निर्धारण करने को क्लाइमेटोलोजिकल एप्रोच कहते हैं। ~~विभिन्न परीक्षणों से यह~~

इसके दो विधियाँ हैं -

(1) अनुपात विधि

(2) डिब्बा वाष्पीकरण विधि

Scanned by CamScanner

Date
Page

(2) मृदा नमी क्षय के आधार पर :- विभिन्न फसलों की आकारिकी, जल प्रणाली, पत्तियों की स्थिति, जीवनकाल आदि भिन्न-भिन्न होने के कारण उनकी जल आवश्यकता तथा उनकी जल संवेदना भी भिन्न-भिन्न होती है।

विभिन्न फसलों में आश्रित उपलब्ध जल ह्रास का स्तर

फसल का नाम	आश्रित उपलब्ध जल ह्रास स्तर (%)
गेहूँ, गन्ना, कपास, मक्का	50
आलू, तम्बाकू	25
बरसीम, धान	0
मटर और गन्ना	65
बाजरा	75

(3) पौधे की वृद्धि की क्रांतिक अवस्था के आधार पर :-

सामान्य दशाओं में कृषकों द्वारा फसलों की वृद्धि की अवस्थाओं में पौधों को जल की अधिक आवश्यकता होती है। प्रत्येक पौधे के जीवनकाल में विकास की भिन्न अवस्थायें होती हैं। अतः जल विकास की अवस्थाओं पर पर्याप्त होना जरूरी है।

पौधों के विभिन्न विकास अवस्थाओं में जिन अवस्था पर सिंचाई न करने से सर्वाधिक ह्रास होता है, उसे ही पौधे की क्रांतिक अवस्था कहते हैं।

Scanned by CamScanner

④ सिंचाई निर्धारण की मिश्रित विधि :- सिंचाई निर्धारण की यह विधि जलवायुवीय एवं मृदा नमी क्षय विधि का सम्मिलित रूप है। इस विधि में हम दोनों को महत्व देते हैं। यह विधि सर्वोत्तम होती है।

5) सूचक पौधो द्वारा नमी निर्धारण :- कुछ पौधे ऐसे होते हैं जो नमी की कमी के लक्षण बहुत जल्दी प्रदर्शित करते हैं। उन पौधो को हम सूचक पौधे कहते हैं। मुख्य खेत में ही हम तीन चार जगह सूचक पौधे जैसे सूरजमुखी की बुवाई कर देते हैं। यदि सुचक पौधे में मुरझाना के लक्षण नजर आ रहे हैं तो यह संकेत होता है कि अब हमारी मुख्य फसल को सिंचाई दे देनी चाहिये।

6) पादप घनत्व बढ़ाकर सिंचाई का निर्धारण :- सिंचाई निर्धारण कि यह विधि इस बात पर आधारित है कि यदि पौधो का घनत्व ज्यादा होगा तो उपलब्ध जल उस शीघ्र हो जायेगा। चूँकि एक सही सिंचाई निर्धारण की संज्ञा उस विधि को दी जाती है जो सिंचाई की अवस्था का ज्ञान पूर्व में दे दे। अतः इस विधि में हम खेत के चारो कोनो पर पौधो की संख्या सामान्य से चार गुनी कर लेते हैं और सिंचाई निर्धारण के लिये इन कोनो के पौधो पर ध्यान देते रहते हैं। यदि कोनो के पौधो में मुरझान के लक्षण स्पष्ट हो रहे हैं तो यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि आने वाले एक दो दिन में फसल की सिंचाई कर देनी चाहिये।

Scanned by CamScanner